ISSN 2320-2858
UGC Journal No. 42684
मार्च 2023
वर्ष - 11
अंक - 124

श्री श्री नरहरि सेवा संस्थान

प्रत्यक्ष दर्शी लोकस्य सर्वदर्शी भवेन्नर:

ब्रज लोक संपदा

सौजन्य : गीता शोध संस्थान एवं रासलीला अकादमी, वृन्दावन

विभाण्डक ऋषि कुमार श्रृंग

ब्रज लोक संपदा

साहित्य, कला, संस्कृति, मानविकी एवं समाज विज्ञान की अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

संपादक :

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा

★

सह-संपादक :

चन्द्र प्रताप सिंह सिकरवार

★

सहयोग :

डॉ. रश्मि वर्मा

★

कला संयोजन :

ब्रज ग्राफिक्स

कार्यालय :

ब्रज लोक संपदा कार्यालय, 302, गुरुकुल रोड, वृन्दावन

मो. : 09410619265, 7017709490

Website : www.brajloksampada.com ⋆ E-mail : brajloksampada@gmail.com

स्वामी मुद्रक एवं प्रकाशक

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा द्वारा चौधरी प्रिंटिंग प्रेस, ब्रह्मकुण्ड, वृन्दावन, मथुरा से मुद्रित कराकर 302, गुरुकुल मार्ग, वृन्दावन (मथुरा) से प्रकाशित।

ब्रज लोक संपदा भारतीय संस्कृति के मासिक शोध-पत्र की पृष्ठभूमि में हमारा यह सद् प्रयास है कि भारत की क्षेत्रीय कला व साहित्य का प्रज्ञात कलेवर परिवेषण कर राष्ट्रीय भावात्मक एकता के सूत्र को परस्पर संस्कृति के आदान-प्रदान से पुष्ट करें; इसी से व्यक्ति का व्यक्तिवाद शिथिल होकर समन्वित भाव से लोक अस्मिता के रूप में विकासोन्मुख नव जीवन का स्वरूप ग्रहण करेगा।

आवेदन - पत्र

कृपया मैं व्रजलोक संपदा पत्रिका का एक वर्ष का सदस्य बनना चाहता/चाहती हूँ। सदस्यता शुल्क.....नकद/चैक/ड्राफ्ट नं.....
दिनांक .....संलग्न है।

श्री/श्रीमती/.....

पिता/पति का नाम.....

जहाँ पत्रिका मंगाना चाहते हो वहाँ का पूरा पता .....

.....

पिन..... दूरभाष/मो०.....

हस्ताक्षर

(कृपया उक्त आवेदन पत्र को हाथ से लिखकर या टाईप कराकर भेज सकते हैं)

सदस्यता शुल्क

एक प्रति- 100/-, एकवर्षीय - 1100/-

विशेष: अपना चैक/ड्राफ्ट: श्रीश्री नरहरि सेवा संस्थान के नाम से
302, गुरूकुल रोड, वृन्दावन, मथुरा, उ.प्र., पिन: 281121 पर भेजें।

बैंक का नाम - केनरा बैंक

शाखा - विद्यापीठ चौराहा, वृन्दावन

खाता संख्या - 2480101002061

आईएफसी कोड - CNRBN0002480

प्रकाशित आलेखों के विचारों से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
शोध पत्रिका से सम्बन्धित सभी विवाद केवल मथुरा न्यायालय के अधीन होंगे।

सम्पादकीय

डॉ. उमेश चन्द्र शर्मा

ब्रज की लोक गाथाओं व कथाओं का स्वरूप अति समृद्धशाली रहा है। वस्तुत: लोक साहित्य और लोक संस्कृति सामान्य जन की रचना होती है। यह निरंतर परंपरा होती है, अत: इनकी रचनायें सर्व मंगल से पूर्ण होती हैं।

इसके अन्तर्गत चाहे कहानी हो अथवा अन्य लोक विधा हों अपनी रोचकता के अतिरिक्त समाज में शिक्षाप्रद जो सन्देश प्रसारित करती है वह सभी वर्गों के लिये अहं भूमिका प्रदान करता है।

ब्रज की सांस्कृतिक परम्परा तथा पुरातात्विक उपलब्धियाँ संपूर्ण भारतवर्ष में अग्रणी मानी जाती है। यहाँ गिरिराज की तलहटी से प्राप्त पाषाण कालीन उपकरण इस बात के प्रमाण हैं कि इस क्षेत्र में मानव के क्रिया कलाप प्राचीन काल में सक्रिय हो चुके थे। यहाँ की चित्रकला और मूर्तिकला दोनों ही उच्च स्तरीय कलाओं में परिगणित हुई।

अन्तर्वस्तु

1.	श्रीमद्भगवद् गीता	05
2.	ब्रजलोक की लघुकथाओं में सामाजिक चेतना – *हरदेव 'निमौतिया'*	06
3.	मध्य भारत की कथा – *डॉ. भारती परमार*	10
4.	परिक्रमा मार्ग में नारद कुंड की अकल्पनीय सुंदरता – *चन्द्र प्रताप सिकरवार*	17
5.	अतीत की कहानियाँ कहती संग्रहालय की मूर्तियां – *सुनील शर्मा*	20
6.	महाप्रभु वल्लभाचार्य व श्रीचैतन्य देव – *कपिल देव उपाध्याय*	26
7.	वल्लभ संप्रदाय मांहि अष्टछाप – *हरि बाबू ओम*	30
8.	परिक्रमा मार्ग में नारद कुंड की अकल्पनीय सुंदरता – *चन्द्र प्रताप सिकरवार*	32

श्रीमद्भगवद्गीता

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः।
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता॥

हे अर्जुन! नाना प्रकार की सब योनियों में
जितनी मूर्तियाँ अर्थात् शरीरधारी प्राणी उत्पन्न होते हैं,
प्रकृति तो उन सबकी गर्भ धारण करने वाली माता है
और मैं बीज को स्थापन करने वाला पिता हूँ॥14.4॥

ब्रजलोक की लघुकथाओं में सामाजिक चेतना

हरदेव 'निमौतिया'

ब्रज का गद्य लोकसाहित्य, लोक द्वारा रचित वह साहित्य है, जो लोक-जीवन को पूरी आस्था और विश्वास के साथ उसके प्राचीनतम रूपों की रक्षा करता हुआ कहानी एवं कथा रूप में अभिव्यक्त हुआ है। लघु कथाएँ ब्रज के गद्य लोकसाहित्य का एक बड़ा भाग हैं। ब्रज क्षेत्र में लघु लोक कथाएँ इतनी लोकप्रिय रही हैं कि यहाँ कथा में से कथा निकालते हुए श्रृंखलाबद्ध रूप से कथाएँ सुनने व सुनाने की परंपरा रही है। ब्रज प्रदेश की लघु लोक कथाएँ एवं कहानियाँ प्राय: समस्त दैनिक कार्यों से निवृत्ति पाकर शयन के समय सुनी और सुनायी जाती थीं। समाज के अलिखित संविधान के रूप में प्रचलित पारंपरिक संस्कारों, मान्यताओं, धारणाओं को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में पहुंचाने का एक प्रभावशाली साधन भी रही हैं। यद्यपि आज एकल परिवारों और महानगरीय व्यस्त जीवन के कारण इन लघु लोककथाओं को सुनने सुनाने की परंपरा के अवसरों में क्षीणता आई है परंतु इनकी लोकप्रियता में कोई कमी नहीं है और समाज को सचेत करने व संस्कारित करने की दृष्टि से पीढ़ी दर पीढ़ी चली आयी हैं। ये लघु लोक-कथाएँ टेलीविजन पर नाट्य श्रृंखलाएँ, इन्टरनेट पर कहानी और विविध पत्र-पत्रिकाओं में नन्दन, चंदा मामा जैसी बाल पत्रिकाओं में पठनीय रूप में अभी भी प्रचलित हैं। ग्रामीण क्षेत्रों और बुजुर्गों वाले परिवारों में आज भी पीढ़ियों को जोड़ने और समाज के पारंपरिक संस्कारों आदि धारणाओं के प्रति अगली पीढ़ी को संस्कारित और चेतनावान बनाने के लिए इनका कथानक रुचिपूर्ण सुनना-सुनाना देखने को मिलता है। लघु लोक कथाएँ ब्रज संस्कृति की सच्ची संरक्षक एवं संवाहक होती हैं। इन लोक-कथाओं में ब्रजवासियों के जीवन की बहुरंगी छवि देखने को मिलती है। ब्रज लोक कथाएँ ब्रज के लोकमानस की स्वाभाविक उपज हैं। अत: ब्रज की लघु लोक कथाओं में ब्रज लोकजीवन का सरल, सहज एवं स्वाभाविक चित्रण रोचक शैली में मिलता है। ब्रज की लघु लोककथाएँ किसी समाज के प्रसिद्ध व्यक्ति, स्थल, वस्तु से संबंधित होती हैं। इनका मुख्य उद्देश्य लोक में सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों को पीढ़ी दर पीढ़ी स्थापित करना है। लघु लोक कथाओं की धारा का प्रसार दादी से पोती, नानी से धेवती तक श्रुतिमार्ग से होता आया है। इन लोक-कथाओं के माध्यम से समाज में व्याप्त सास-बहू का कटु-मधुर संबंध, ननद-भौजाई का वैमनस्य तथा विधवा की दशा आदि का मार्मिक एवं यथातथ्यपूर्ण परिचय मिलता है। लोक-कथाओं के संदेश हेतु समाज के लोग साक्षर न हो फिर भी जनता के ज्ञान में बराबर वृद्धि होती रहती है। इस ज्ञान को समाज के लोग कानों से ग्रहण करते हैं। लघु लोक-कथाएँ बचपन में बालसुलभ और बुढ़ापे में वृद्ध सुलभ तथा सामाजिक एवं नैतिक शिक्षा का प्रमुख केंद्र रही हैं। ये लघु लोक कथाएँ शिक्षा वितरण का सर्वोत्तम साधन हैं। माता-पिता, भाई-बहन,

दादा-दादी, अड़ोसी-पड़ोसी अबोध बालक की ज्ञान के झोले में कोई न कोई बिना मांगे ही ज्ञान रूपी रत्न डालते रहते हैं। आज पारिवार के सदस्य शाम के समय बिजली के चले जाने पर बालकों का मन बहलाने के लिए लोक कथा सुनाते हैं। दादी-नानी की घरेलु कहानियाँ या लोक-कथाएँ बालक को हुँकार के साथ कभी आश्चर्य, कभी उत्साह और कभी उदारता के पाठ पढ़ाती चलती हैं। इन लघु लोक कथाओं में बालक के ध्यानाकर्षण हेतु परिचित कुत्ता, बिल्ली, कौआ, मोर, तोता, सारस, लोमड़ी, गीदड़ आदि पात्र जीवन की व्याख्या बालक की मातृभाषा में करते चलते हैं। डॉ. सत्येन्द्र लिखते हैं कि वेदों की बीज-कहानियाँ ही पुराणों की कथाओं में पल्लवित पुष्पित हुई हैं। इन कथाओं के मूल प्राय: वेदों में देखे जा सकते हैं।

लघु लोक-कथाओं में व्यक्त सामाजिक चेतना- लघु लोककथाएँ ब्रजलोक में प्रचलित वे कथाएँ हैं जो मनुष्य की कथा प्रवृति के साथ चलकर विभिन्न परिवर्तनों को ग्रहण करती हुई वर्तमान रूप में प्राप्त होती हैं। ये लघु लोक-कथाएँ छोटे-छोटे वाक्य, सहज एवं स्वाभाविक शब्दावली से निर्मित एवं सामाजिक चेतना से परिपूर्ण होती हैं। विभिन्न विद्वानों ने इनका वर्गीकरण अपने-अपने मतानुसार किया है। ब्रज की ये लघु लोककथाएँ कई वर्गों में वर्णित हैं, जैसे- पौराणिक एवं सामाजिक कथाएँ, व्रत एवं धार्मिक कथाएँ, उपदेशमूलक एवं मनोरंजक कथाएँ आदि। ब्रज की लघु लोक कथाओं की कथावस्तु बहुत छोटी परंतु अत्यंत प्रभावी होती हैं। ब्रज की लघु लोक कथाएँ प्रेरणात्मक एवं शिक्षाप्रद होती हैं। लोक-कथाओं में अलौकिक तत्वों का समावेश पर्याप्त मात्रा में मिलता है। इनके प्रभाव क्षेत्र के संबंध में यह कहना उचित ही प्रतीत होता है- **"देखन में छोटी लगें अरु घाव करें गंभीर"** अर्थात् ये लोक-कथाएँ लघु होते हुए भी कम समय लेते हुए अधिक प्रभावी होती हैं।

ब्रज संस्कृति धर्मपरायण संस्कृति है और धर्म का स्वरूप कुछ भी हो मूल आशय मानवीय कर्तव्यों से ही जुड़ा है। ये पौराणिक लोककथाएँ भले ही चमत्कार और अलौकिक वृतांतों से भरी हुई हैं तथापि जनमानस में इनकी पैठ इतनी गहरी है कि विद्यालयी शिक्षा में बहुत स्थान न होने पर भी घर परिवार और समाज में ये बहुतायत से सुनी और सुनायी जाती हैं। ये सभी धार्मिक कथाएँ ब्रज लोक संस्कृति में प्रकृति और मनुष्य के साहचर्यपूर्ण सम्बन्धों की कथाएँ हैं इसलिए इनमें प्रकृति के विविध उपादानों जैसे नदी, वृक्ष आदि को मानवीकृत रूप में तो दिखाया ही गया है। इन लोक कथाओं में ईश्वर को भी मानवोचित व्यवहार करते दिखाया गया है। उन्हें मानव समाज के हितों से जोड़कर भी प्रस्तुत किया गया है। धार्मिक लोक कथाओं में व्रत, उपवास, जप- तप एवं उनसे प्राप्त उपलब्धियाँ अभिव्यक्त हुई हैं। सुखों की कामना के लिए कही गईं इन व्रत कथाओं से उपदेश ग्रहण कर संबद्ध पर्वों के अवसरों पर महिलाएँ व्रतों का पालन किया करती हैं। पति, पुत्र एवं भाइयों की कुशलता तथा संपत्ति प्राप्ति करना इनका उद्देश्य होता है।

'सत्यवान सावित्री' लोक-कथा जन सामान्य में अपने सामाजिक दायित्व बोध के प्रति चेतना जागृत करती है। सर्वप्रथम अपने हित से पहले पारिवारिक दायित्व बोध के आधार पर सास-ससुर की नेत्र ज्योति मांगती है फिर सामाजिक दायित्व के आधार पर वह राज्य मांगती है। उसके बाद फिर उस राज्य के परिवार और

व्यक्तिगत संबंध के दायित्व बोध के आधार पर अपने लिए सत्पुत्रवती होने का वरदान यमराज मांगती है। बड़ी कुशलता से पूरी कथा ब्रज लोक में एक व्यक्ति के रूप में स्त्री की बुद्धिमता, विवेकशीलता, कर्तव्यपरायणता और समाज में उसके अधिकारों में सम्मानजनक स्वीकृति की चेतना भी सुगम शैली में स्थापित करती है। इस लोक-कथा में सावित्री के माध्यम से ब्रज लोक में स्त्री के पातिवृत्य धर्म एवं कर्तव्य निर्वाह के प्रति ामाजिक चेतना व्यक्त की गई है।

ब्रज के गद्य लोकसाहित्य में अनेक व्रतोत्सव एवं नैतिकतामूलक कथाओं का समागम है। उन कथाओं में सोमवार व्रत कथा, अहोई अष्टमी, करवा चौथ आदि लोक-कथाएँ हैं जो सामाज में अपनी लोक संस्कृति के प्रति चेतना जागृत करती हैं। ब्रज लोक की अनेक छोटी-बड़ी कथाओं में मानव कल्याण चेतना के विभिन्न उपदेश भरे पड़े हैं। ऐसी कथाएँ प्राय: अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षा देती हैं। इनके माध्यम से हमें सामाजिक बुराइयों से बचने के लिए लोक चेतना मिलती हैं। ब्रज की लोक-संस्कृति और ब्रजभाषा के उन्नयन में ब्रजलोक में प्रचलित लघु लोक-कथाओं का विशेष योगदान रहा है। यहाँ कुछ महत्वपूर्ण लघु लोक कथाओं में सामाजिक चेतना को व्यक्त किया गया है, जो लोक-जीवन के विभिन्न पहलुओं से परिचय कराती हैं।

'सत्य की जड़ हरी' और 'दीन कौ न दोजख कौ' ब्रज की लघु लोक कथाएँ इसी प्रकार की हैं जिनमें सत्य को अच्छा तथा असत्य को बुरा ठहराया गया है तथा जो व्यक्ति अच्छे कर्म करता है उसे स्वर्ग और बुरे कर्म करने वाले को दोजख मिलता है 'सत्त की जड़ हरी' में दान के महत्व का प्रतिपादन किया गया है। अत: अच्छे कर्म करने वाला समाज में प्रशंसा के योग्य है। समाज में उसे यश की प्राप्ति होती है। अगर हम सत्य का पालन करेंगे तो कठिन समय में भगवान भी हमारा साथ देंगे। इस प्रकार इस लघु लोक-कथा में मानवोचित कर्तव्य को सच्चा धर्म बतलाया गया है। नर में ही नारायण का वास होता है। इस लोक-कथा के माध्यम से लोकसमाज में सतकर्म करने की सामाजिक चेतना व्यक्त की गई है। 'धरमराज' लघु लोक कथा समाज में व्याप्त ढोंग व पाखंड के भय से मुक्त होने की चेतना देती है।

'सुसरार सुख की सार' लघु लोक-कथा द्वारा लोक समाज में व्यक्ति के मान-सम्मान के संबंध में सामाजिक चेतना अभिव्यक्त की गई है कि जिस प्रकार हमें ससुराल में कम समय तक रहने पर जो मान-सम्मान मिलता है वह ज्यादा दिनों तक रहने पर नहीं मिलता। अगर ज्यादा समय रहे तो कुछ समय बाद सामान्यजनों की भाँति व्यवहार होने लगता है। अत: इस लोक-कथा में स्वावलंबन व स्वाभिमानी की सीख दी गई है।

'सीख न दीजै बांदरा' लघु लोक-कथा द्वारा लोक समाज में यह चेतना व्यक्त की गई है हमें उन्हीं लोगों को सीख देनी चाहिए जिन्हें सीखना अच्छा लगता हो। यदि हम बंदर जैसे स्वभाव वाले लोगों को सीख देने की कोशिश करेंगे तो उससे अपना ही नुकसान एवं निरादर होता है। जिस प्रकार बया द्वारा बंदर को सीख देने पर हुआ था। तबही तो कहो जाय -

"सीख जाकौ दीजिए, जाकौ सीख सुहाय,
सीख न दीजे बांदरा, घर बया को जाय।"

"ढेले और पात" की लघु लोक-कथा हास्य एवं चेतनाप्रद कथा है। इस कथा में भविष्य की आकस्मिकता के प्रति सतर्क रहने का बोध है। जीवन की नश्वरता और भविष्य में विपद और संपद का आगमन भी अनिश्चय से भरा होता है इसलिए समाज को सीख है कि जो भी समीप हैं उन सभी के साथ सहयोग करके चलना चाहिए। अत: यह लोक कथा हमें लोक समाज में परस्पर सामाजिक सहयोग की भावना जागृत करती है।

'सुसरार के भोजन' लघु लोक कथा हास्य के साथ-साथ चेतनाप्रद भी है। इसमें मेहमान अपने मान एवं शर्म के भाव से पापड़ न माँगकर अपनी सामाजिक समझ या चतुराई द्वारा अपनी सास को पापड़ परोसने की बात याद दिलाता है। यदि युक्ति और विवेक से कार्य किया जाए तो सम्मान और कार्य निष्पादन दोनों संभव है और समाज में शिष्टाचार का संबंध है। युक्ति से इन दोनों की रक्षा की जा सकती है। इस लघु लोक कथा में यह लोकचेतना अभिव्यक्त होती है कि हमारे लिए लोकसमाज में अपना सम्मान बनाए रखना ही सबसे बड़ी समझदारी है।

'भैया पांचें' लघु लोक-कथा स्त्री विमर्श पर अच्छा ध्यान केन्द्रित करती है। सास स्त्री होने पर भी अपनी बहू को तिरष्कृत करती है क्योंकि उसके भाई नहीं हैं। ब्रज संस्कृति में भाई को सदैव बहन के प्रति दायित्व बोध से बांधा गया है। ब्रज क्षेत्र में बेटी केवल एक परिवार की नहीं पूरे गाँव की मानी जाती है। यह बोध समाज में स्त्री को अधिक सुरक्षित और सम्मानित जीवन देने के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। आज के दौर में पूंजीवाद के प्रभाव से इसी बोध की क्षीणता ने आज स्त्री को संकट में और पुरुषों को दुष्कृत्यों के गर्त की ओर धकेल डाला है। प्रतीकात्मक रूप में यह संकेत भी है कि सास की सताई बहू घर से बाहर निकलती है तो बाहर उसे साँप जैसे दुष्टजन भी मिल सकते हैं। यहाँ संयोगपूर्ण संस्कृति के प्रभाव से उस साँप ने भाई के समान उस बहू का सम्मान किया। इस लघु लोक कथा में सास का बहू के साथ जो कटु व्यवहार था, उसे बतलाया गया कि किस प्रकार बहू अपनी सास से दुखी होकर जीवन व्यतीत करती है और अंत में साँप उसे अपनी धर्म की बहन मानकर मदद करता है। जिससे उसके प्रति सास का व्यवहार ठीक होने लगता है। इस लघु लोक-कथा के माध्यम से लोक समाज के सामाजिक सम्बन्धों के प्रति चेतना व्यक्त की गई है।

★★★

मध्य भारत की कथा

डॉ. भारती परमार

मध्य-देश की कला व संस्कृति प्रागैतिहासिक काल से लेकर बौद्ध विचारधारा तक अपने समय में एक विशिष्ट स्थान रखती है। मांडव के स्थापत्य तथा मालवा कलम इस काल की उत्कृष्ट देन है। मालवा कलम अन्य लघु चित्र शैली की तरह कथ्याधारित तो है ही किंतु शैली का प्रखर रूप सरलीकृत रूपकार और रंगों के निर्भिक प्रयोग से आश्चर्यजनक रूप में द्विगुणित होता है। मध्य प्रदेश में मैथोलिथिक काल में यहां की भूमि उस काल के मानव की पदचाप से गुंजित रहती थी। अनुभवों को अपनी माटी की गंध में तपा कर यहां के कला मनीषियों ने अपनी भावाव्यक्ति अपने रचनात्मक अनुष्ठानों को भीमबैठका की भित्तियों पर अभिलेखित कलात्मक रूप प्रदान किया है।

पचमढ़ीके समीप कई गुफाओं में विभिन्न पशु पक्षियों के रोचक चित्र मिले हैं। आबचंद्र में एक स्थान पर एक व्यक्ति बैल को रस्सी से खींचता हुआ दिखाया गया दूसरे चित्र में लंबी सींग वाले (अरना) आरण्यक भैसे बने हैं।***1***

मध्यप्रदेश में प्रागैतिहासिक काल के अवशेष रायसेन जिले के भीमबैठका की गुफाओं में एवं सागर के निकट पहाड़ियों में शैल चित्रों के रूप में तथा छनेरा, नेमावर, मांजावाडी, महावर देहगांव हार्डिया, कबरा, पंचमढ़ी आदि से प्राप्त होते हैं।

मध्य प्रदेश के सतना जिले में प्रसिद्ध भरहुत स्तूप है। प्रदेश के खजुराहो में कुल 85 मंदिर थे जिनमें केवल 22 मंदिर ठीक अवस्था में है। धार जिले में गुप्त वंशजो द्वारा बनवाई गई बाघ की गुफाएं हैं। 510 ई. का प्रस्तर स्तंभ लेख मध्य प्रदेश के सागर जिले के ऐरण से प्राप्त हुआ है।***2***

मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश के कई स्थानों पर शिलाश्रय मिले है, जिनकी भीतरी छतों और दीवारों पर अनेक ढंग की रोचक चित्र रचना मिली है। इन शिलाश्रयों के काल के सम्बन्ध में विद्वानों में गहरा मतभेद है। एक ओर कुछ विद्वान् इन्हे प्रागैतिहासिक कालीन मानते है।

भारत में जितने चित्रित शिलाश्रय प्राप्त हुए है, उनमें से मध्य प्रदेश में पाये जाने वाले शिलाश्रयों की संख्या सबसे अधिक है। ये चित्रित शिलाश्रय होशंगाबाद, सागर, रीवा, मंदसौर, जबलपुर, सीहोर, रायसेन, ग्वालियर, पूर्व-निमाड़, शिवपुरी, छिन्दवाड़ा, छतरपुर, दमोह, पन्ना तथा नरसिंहपुर जिलों के अनेक स्थानों पर मिले है। अधिकांश गुफा चित्रों में लाल, सफेद, काला, नीला या पीला रंग उपयोग में लाया गया है। कई चित्रों में पहले लाल अथवा सफेद रंग की पृष्ठभूमि देकर उस पृष्ठभूमि पर चित्र बनाए गए है। इन गुफा चित्रों से वहाँ

निवास करने वाले लोगों की जीवन चर्चा तथा रूचि का पता चलता है।

आदिम काल से लेकर मनुष्य संस्कृति के निर्माण में संलग्न है और संस्कृति की परत-दर-परत निर्मित होती गई। एक ओर मानव संस्कृति को रचता गया, दूसरी ओर स्वयं उसके द्वारा प्रकृति के योग से रचित होता गया, किन्तु नियत्रंण और सुरक्षा का भाव भी बनाए रखा।

पूर्व मध्य काल में मध्य प्रदेश गुर्जर प्रतिहार, परमार, चंदेल तथा कलचुरि वंश के महान शासकों के आधिपत्य में रहा। इस काल में जहाँ यह क्षेत्र अपने राजनीतिक कीर्ति को सम्पूर्ण उत्तर और मध्य भारत में प्रसारित कर रहा था वहीं धर्म, कला और संस्कृति का भी इस काल में अभूतपूर्व विकास किया। मानव सभ्यता के आरंभिक इतिहास में जिस कला ने अपना नाम अभिन्न रूप में जोड़ दिया है उसे आदिम कला कहा जाता है। इसका संबंध केवल प्रागैतिहासिक युग से ही नहीं हैं। विश्व के अनेकों भू-भागो में उसी प्रकार की परिस्थिति में आज भी जो मनुष्य रहते हैं उनकी सभ्यता आदिम सभ्यता ही है, इसलिए उनकी कला भी आदिम कला है।*3* शैल चित्रों के विषय में यह कहना कठिन है कि इन चित्रों को केवल पुरुष वर्ग के लोगों ने बनाया अथवा इसमें नारियों का भी योगदान था। चित्रों की विषय वस्तु से क्षीण अनुमान लगाने का प्रयास किया जा सकता है कि चित्र रचना में नारियो का कितना और किस तरह का योगदान था।*4*

मध्यप्रदेश में महाकवि कालीदास, भर्तृहरि, भवभूति, बाणभट्ट जैसे महान कवियों ने जन्म लिया है। वहीं आचार्य केशवदास, कवि पदमाकर, भूषण, माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्रा कुमारी चौहान, बालकृष्ण शर्मा, पण्डित भवानी प्रसाद मित्र, हरिशंकर परसाई, शरदजोशी, मुल्ला रमूजी, शिवमंगल सिंह सुमन, आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी जैसे महान रचनाकर हुए है। मध्य प्रदेश में तानसेन जैसे संगीत सम्राट ने जन्म लिया। उस्ताद अलाउदीन खाँ, उस्तादहाफिज खाँ, कृष्णराव शंकर पंडित, शंकर राव पंडित, राजा भैया छवाले, उस्ताद अमीर खाँ, कुमार गंधर्व, राजा चक्रधर सिंह जैसे संगीतज्ञ भी हुए हुए है।

मध्यप्रदेश की कला

मध्य प्रदेश में कला के प्राचीनतम् प्रमाण भीमबैठका में प्राप्त होते है। भीमबैठका में प्राप्त सभागृह विश्व का पहला ज्ञात रंगमंच है। यहां के कला मनीषियों ने अपनी भावभिव्यक्ति को, अपने रचनात्मक अनुष्ठानों को भीमबैठका की भित्तियों पर अभिलेखित कर कलात्मक रूप प्रदान किया है। रायगढ़ के निकट दुर्गम पहाड़ियों में स्थित सीताबेंगा और जोगीमारा की गुफाओं का संबंध रामायण काल से बताया जाता है। सीताबेंगा की चट्टानों को तराश कर बनाया गया है। रंगमंच समुद्र तट से दो हजार फुट ऊपर स्थित है। मध्य प्रदेश में ही स्थित बाघ गुफाओं के चित्र कथ्याधारित होने के बावजूद रचनात्मक उत्कर्ष के स्तर पर यूरोप में प्राप्त चित्रों की अपेक्षा अधिक ग्राह्य और व्यापक है।*5* खजुराहो और हिंगलाजगढ़ के शिल्प जीवन की प्रेरक शक्ति है।

चित्रकला की दृष्टि से प्राप्त तथ्यों के आधार पर बाघ की नौ गुफाओं में से सात गुफाओं के चित्र नष्ट हो चुके हैं। सिर्फ चौथी एवं पांचवी गुफा में ही कुछ चित्र शेष बचे हैं। बाघ के चित्रों की प्रतिलिपियां आज भी ग्वालियर दुर्ग के गुजरी महल की एक बारहदरी में सुरक्षित हैं। बाघ की चित्रशैली, रंग एवं विषयवस्तु की दृष्टि से अजंता के अनुरूप है।

महाराज सुबंधु के ताम्र पत्र के अनुसार ऐसा ज्ञात होता है कि बाघ की गुफाओं का निर्माण चौथी पांचवी शताब्दी में हो चुका था, क्योंकि इतिहासकारों ने सुबंधु का समय 416-486 ई0 के बीच निर्धारित किया है।*6*

मालवा शैली

मध्य प्रदेश में मालवा का पर्यावरण सुखवस्तु जीवन का पोषक रहा है। यहां नवरत्नों के भूषण राजा विक्रमादित्य तथा उनके नवरत्नों के योगदान से यहां सांस्कृतिक सम्पन्नता आई है। इस समय प्रचुर साहित्य रचना हुई। साहित्य व चित्रलेखन को इसीमार्ग से प्रोत्साहन मिला। मालवा के रसिक धनिक वर्ग की हवेलियों में बने चित्र इसके प्रमाण है।

भारतीय परम्परा में एक रंगी सपाट लाल पृष्ठभूमि, जल का चटाईदार अंकन, परवर्ती मालवा प्रकार के अलंकारिक वृक्ष और सर्वोपरि लहरियादार लाल, नीली, सफेद रेखाओं द्वारा अंकित बादल आदि मिलते हैं। मालवा शैली से साम्यता देखते हुए डॉ. आनन्द कृष्ण ने इसे मालवा में चित्रित माना है।*7*

मालवा की राजधानी माण्डू भारतीय सुल्तानों के काल में कला एवं संस्कृति का प्रमुख गढ़ रही है। मालवा से सत्रहवीं शती के पूर्व तक जो चित्रित उदाहरण मिले, वह पश्चिम भारतीय शैली के हैं।*8*

मालवा की चित्रशैली का प्रारंभ बाघ की गुफाओं में चित्रित शैली से माना जाता है। यह शास्त्रीय है। इस शैली में वक्र रेखा (कर्व लाईन) पर विशेष ध्यान दिया जाता है। चित्रों की आकृतियों में गोलाई के लिए वर्तनी शेडिंग का प्रयोग किया जाता है। चित्र में अति सर्वथा वर्ज्य मानी गयी है। इसमें अलंकरण और आभूषण अल्प होते है। बाघ और अजंता की गुफाओं में नागर शैली का उपयोग किया गया है।

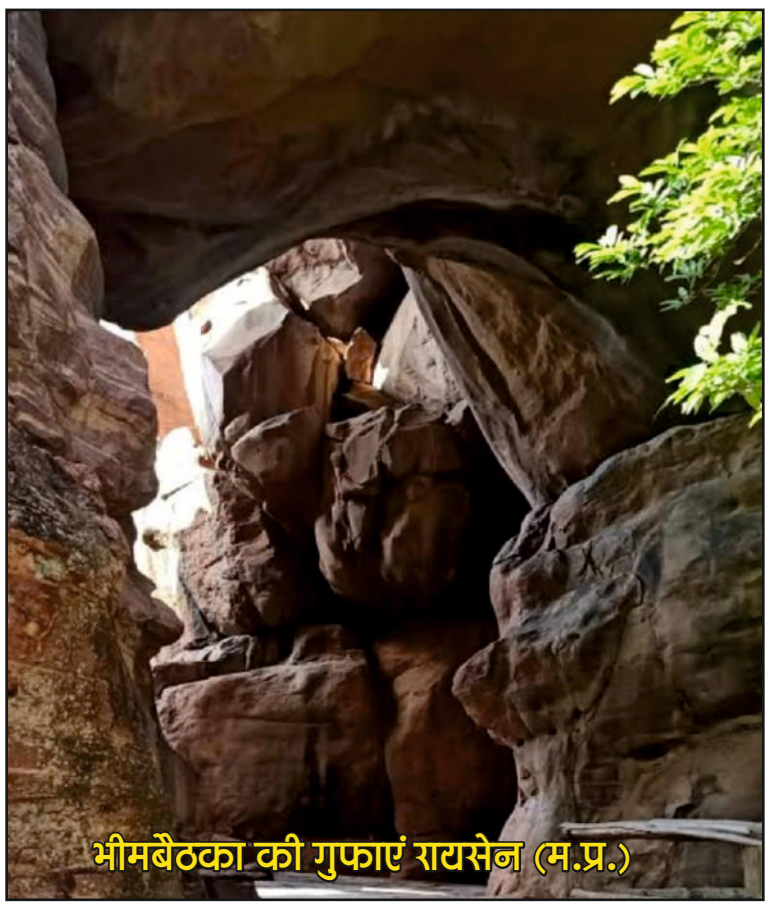
भीमबैठका की गुफाएं रायसेन (म.प्र.)

मालवा सभ्यता अत्यन्त प्राचीन है। आदिमानव जिन गुफाओं में रहते थे, उनमें से हजारों गुफाएँ मालवा में हैं और उनमें से बहुसंख्यक गुफाएँ उन आदिमानवों के चित्रणों से भरपूर हैं। भोपाल के निकट के भीमबैठका की सहस्त्राधिक चित्रित गुफाएँ विश्वप्रसिद्ध हैं, जिनकी खोज डॉ. वि.श्री. वाकणकर ने की थी। जहाँ वर्षों उत्खनन भी उनके मार्गदर्शन में होते रहे। लोकविश्वास

प्रचलित है कि महाभारत का भीम कभी भोपाल के निकट की इन पहाड़ियों पर आकर बैठा था, इसलिए यह क्षेत्र भीमबैठका कहलाता है। यहाँ के अवशेषों और चित्रों से सभ्यता का पूरा विकास ज्ञात हो जाता हैं।

बाघ गुफाओं के चित्रों के पश्चात् एक दीर्घ अंतराल से मालवा में चित्रकला की गतिविधयां पुनः प्रारंभ हुई, जिसे जैन शैली तथा अपभ्रंश शैली कहा गया। इस शैली को एलोरा की शैली का विस्तार माना गया। उस समय मालवा में जैन धर्म का प्रभाव था। कल्पसूत्र का चित्रण इसी काल में हुआ।

बाघ की गुफाएं मध्यप्रदेश में धार जिले के अंतर्गत विंध्य श्रेणी के उस भाग मेंअवस्थित है, जहाँ आज घोर जंगल एवं भीलों की बस्ती है निकट ही नर्मदा की सहायक बाघिनी नामक नदी बहती है। यहाँ से 2-3 मील की दूरी पर बाघ नामक गाँव है, इसी गाँव के नाम पर इन गुफाओं का नाम "बाघ" पड़ गया। इनकी संख्या 9 है जो इन्दौर से 98 मील की दूरी पर है। बाघ की नौ गुफाओं में से सात गुफाओं के चित्र नष्ट हो चुके हैं। सिर्फ चौथी एवं पाँचवी गुफा में ही चित्र शेष बचे हैं। इनके आधार पर यहाँ की चित्रकला परम्परा का ज्ञान प्राप्त होता है। चित्रों में प्रयुक्त रंग खनिज है।

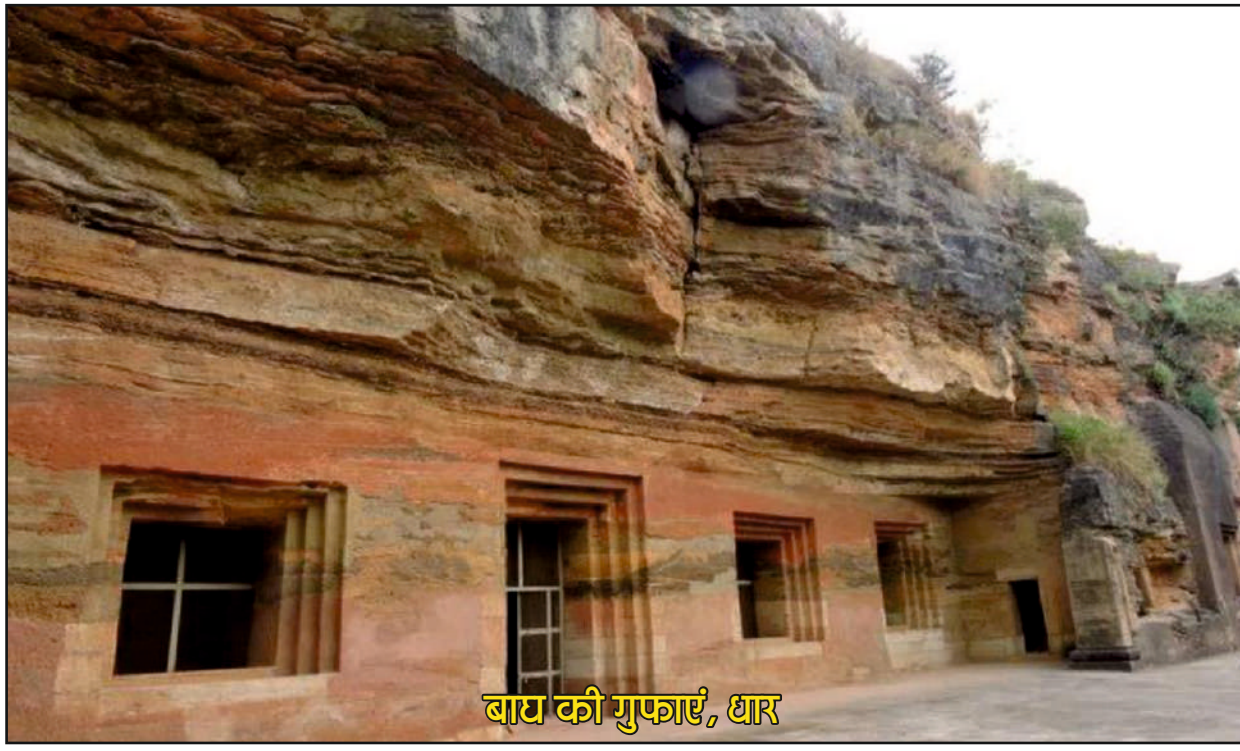

बाघ की गुफाएं, धार

भारतीय परम्परा में एकरंगी सपाट लाल पृष्ठ भूमि, जल का चटाईदार अंकन परवर्ती मालवा प्रकार के अलंकारिक वृक्ष और सर्वोपरि लहरियादार लाल, नीली, सफेद रेखाओं द्वारा अंकित बादल आदि मिलते हैं। मालवा शैली से साम्यता देखते हुए डॉ. आनन्द कृष्ण ने इसे मालवा में चित्रित माना है।*9* मालवा की राजधानी माण्डू भारतीय सुल्तानों के काल में कला एवं संस्कृति का प्रमुख गढ़ रही है। मालवा से सत्रहवीं शती के पूर्व तक जो चित्रित उदाहरण मिले, वह पश्चिम भारतीय शैली के हैं।

ग्वालियर तथा बुंदेलखंड की शैली

डब्ल्यू. जी. आर्चर ने सेंट्रल इंडिया पेंटिंग में कहा है कि ओरछा में चित्रकला की परम्परा नहीं थी। 1596 में इन्द्रजीत सिंह ने बाहर से आए चित्रकारों को आश्रय दिया और 1620 में केशवदास की रसिक प्रिया चित्रांकित किया गया। इन चित्रों में अकबरी शैली की भ्रष्ट कृतियां थी। ओरछा में चित्रकला की परम्परा 18वीं शती के प्रथम अर्धशतक में राजा शत्रुजीत सिंह के समय दिखाई दिया।*10* दतिया में चित्रों की परम्परा ओरछा नरेशों के कारण ही विकसित हुई दतिया के चित्रांकन लिए ओरछा के चित्रकारों को आमंत्रित किए जाने का उल्लेख मिलता है। ओरछा नरेश के राजाश्रय में पल्लवित नई शैली दतिया में पुष्पित हुई। इस शैली के बीज ओरछा और ग्वालियर की देन है।*11* मध्य प्रदेश की चित्रकला के इतिहास में ग्वालियर की चित्रशैली का प्रमुख स्थान है। 18वीं शताब्दी से पहले जबकि ग्वालियर में मराठों का शासन स्थापित नहीं हुआ था, ग्वालियर के तोमरवंश के संरक्षण में चित्रकला तथा संगीत, वस्तु आदि कलाओं की बड़ी उन्नति हुई।

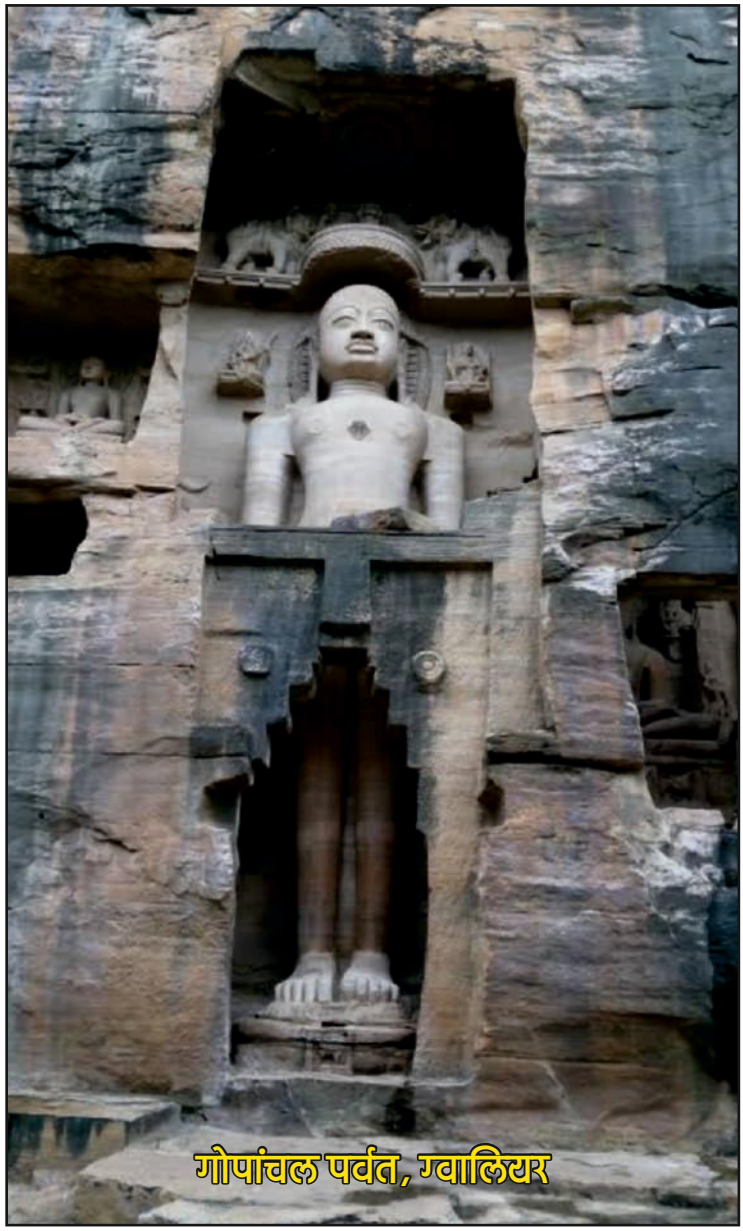
गोपांचल पर्वत, ग्वालियर

बुंदेला राजधानी ओरछा की भांति बुंदेल शासकों की अन्य नगरी दतिया का नाम भी चित्रकला की ष्टि से बड़ा ही गौरवपूर्ण रहा है। ओरछा के पृथ्वी सिंह और दतिया के शत्रु जीत सिंह की कला परंपरा में ही छत्रसाल महाराज का नाम भी विशेष उल्लेखनीय है उनके द्वारा बसाई गई पन्ना राजधानी व अपने गुरु की पावन स्मृति में स्थापित प्रसिद्ध 'प्राणनाथ का मंदिर' की भित्तियों पर प्रदर्शित चित्रकला विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह मन्दिर बाद में प्राणनाथ सम्प्रदाय वालों की कला प्रियता के कारण जितना कलापूर्ण है उतना ही चित्रकला की दृष्टि से अनूठी निधि स्वरूप है।*12*

18वीं शती के पूर्वार्ध में राजस्थानी शैली को आत्मसात कर जो नई शैली दतिया नरेश राजा शत्रुजीत सिंह के समय बनी, उसे बुंदेलखण्ड शैली के नाम से चिन्हित किया गया है।

ग्वालियर में गोपांचल गढ़ को जैन धर्म का गढ़ कहा जाता है यहां जैन प्रतिमाओं का विपुल भंडार है। रइथू ने अगणि अण पंडिम को लम्बाई यहां की जैन मूर्तियों को अगणित कहा है। उनमें से अधिकांश मूर्तियों की प्रतिष्ठा इन्हीं के द्वारा हुई थी। यहां वर्तमान में उपलब्ध जैन मूर्तियां की संख्या 1500 के लगभग है, जो 6 इंच से लेकर 57 फुट तक की है यहां की सबसे विशाल खड्गासन मूर्ति भगवान आदिनाथ की है जो बावन गंजा के नाम से प्रसिद्ध है। भगवान पार्श्वनाथ की विशालतम प्रतिमा पदमासन मूर्ति विश्व में अद्वितीय है, जो पार्श्वनाथ क्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध है। ***13***

इसके अलावा ग्वालियर किले में तेली की लाट मंदिर एवं सास बहू का मंदिर है। ये दोनों जैन मंदिर स्थापत्य कला के बेजोड़ सुंदर मंदिर है। इनके अतिरिक्त महत्वपूर्ण इमारतें मान मंदिर, गूजरी महल, करण मंदिर विक्रम मंदिर, जहांगीर महल, सूर्य मंदिर, चतुर्भुज मंदिर, जयंती थोरा, माता देवी, धाँन्ध देवी और महादेव दर्शनीय है। एक गुरुद्वारा भी है जो दाता बंदी छोड़ के नाम से प्रसिद्ध है।

बघेलखण्ड की चित्रकला

बघेलखण्ड की सोनघाटी प्रागैतिहासिक संस्कृति की जनक कहीं गई है। सोन के कगार पर 'रानीमाची' का शैलाश्रय 20X7 मी. का है। इसमें गेरूए रंग के पशुओं के चित्र बहुलता से बने हैं। पशुओं का चित्रण चौकोर रेखाओं से चित्रित कर उसे आड़ी तिरछी रेखाओं से भरा है। गौरा पहाड़ शैलाश्रय सोन के कगारी क्षेत्र से दूर पहाडियों में है यहां जीवन संघर्ष में पशुओं के संबंध में चित्र बनाए आए हैं। मानव आकृतियों की अपेक्षा पशुओं का अंकन अधिक पाया गया है। ***14***

इस क्षेत्र के अन्य चित्रित शैलाश्रय बिछी-बघोरा, घघरिया, धवलगिरी, टीका, सिंहाबल, तथा चौरवल है। तमस के पठारी कगार और पहाड़ियों के शैलाश्रयों में शैल चित्र बड़ी संख्या में पाये जाते हैं, जिनमें मिर्जापुर जिले में 16 शैलचित्र वाले शैलाश्रय हैं। रीवा-शहडोल मार्ग पर चित्रित शिलाश्रय हैं और 'गुड्डी' में 15 शैलाश्रय में से 12 शैलाश्रय चित्रित हैं। यह उत्तर धनदी तथा रीवा-सीधी मार्ग पर 'गुड्डी' शैलाश्रय कैमोर शीर्ष पर हैं। खनदों में 8 चित्रकला से हैं और गुड्डी में 15 शैलाश्रय में से 12 शैलाश्रय चित्रित है यह उत्तर पाषाण काल के माने गए हैं। लाल, हल्का लाल तथा सफेद रंग से चित्रित हिरण के चित्र प्रमुख हैं।

इन तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि मध्य भारत में प्रागैतिहासिक काल से ही मानव कला के प्रति सजग और संवेदनशील था और अपनी भावनाओं को समय-समय पर कला के माध्यम से व्यक्त करता रहा और यह कला समय काल के अनुरूप परिवर्तित और समृद्ध होती रही है।

संदर्भ सूची

1. प्रो.वाजपेई, कृष्ण दत्तभारतीय संस्कृति में मध्यप्रदेश का योग पेज नं. 85 सरोज प्रकाशन इलाहाबाद 1967।

2. मीणा पीएस मध्य प्रदेश सामान्य ज्ञान 29 उपकार प्रकाशन आगरा।
3. डॉ. अग्रवाल, गिर्राज किशोर 'अशोक' रूपांकन 190, ललित कला प्रकाशन अलीगढ़ 2009।
4. वाजपेयी, एस.के. बादाम, जी.एल. चक्रवती के. के. मध्य भारत की शैल चित्रकला 137 बी.आर. पब्लिशिंग कार्पोरेशन दिल्ली प्र.स. 2009।
5. निरगुणे, बसन्तजिरोती 145 आदिवासी लोककला अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, प्र.स. 2006।
6. डॉ. द्विवेदी, प्रेमशंकर, डॉ. द्विवेदी, मनीष कुमार, भारतीय भित्ति चित्रकला 68, महावीर प्रेस वाराणसी, प्र.सं. 2006।
7. अग्रवाल, मधुप्रसाद, मारवाड़ की चित्रकला 20, राधा पब्लिकेशन्स नईदिल्ली प्र.स. 1993।
8. अग्रवाल, मधुप्रसाद, मारवाड़ की चित्रकला 34, राधा पब्लिकेशन्स नईदिल्ली प्र.स. 1993।
9. अग्रवाल, मधुप्रसाद 20 मारवाड़ की चित्रकला 34, राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली प्र.स. 1993।
10. लक्ष्मण, भाण्ड ,12 मध्य प्रदेश में चित्रकला संचालक जनसंपर्क, म.प्र.।
11. गैरोला, वाचस्पतिभारतीय चित्रकला, 229 चौखाम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली द्वि.स. 1996।
12. डॉ.वर्मा, महेन्द्र भारतीय चित्रकला की परम्परा 76, 77 बुन्देली चित्रकला ओरछा।
13. जैन, रामजीत ग्वालियर गौरव 9, 22 श्री. दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र, गोपांचल पर्वत, संरक्षक न्यास, ग्वालियर।

★★★

परिक्रमा मार्ग में नारद कुंड की अकल्पनीय सुंदरता

★ उ0प्र0 ब्रज तीर्थ विकास परिषद के कार्यों की गुणवत्ता और उत्कृष्टता देखने के लिए नारद कुंड जरूर पहुंचें।

चन्द्र प्रताप सिंह सिकरवार

मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ जी की अध्यक्षता में उप्र ब्रज तीर्थ विकास परिषद जिस गुणवत्ता और उत्कृष्टता के साथ ब्रज को सुंदर बनाने में जुटा है, उसका प्रत्यक्ष रूप यदि देखना हो तो नारद कुंड में देखा जा सकता है।

गोवर्धन की छोटी परिक्रमा स्थित प्राचीन नारद कुंड की वर्तमान में सुंदरता को यहां शब्दों में लिख पाना मुश्किल है। कुंड की सुंदरता अकल्पनीय है। लोग इसे निहारते ही रह जाते हैं। कुछ साल पहले तक ये कुंड पूरी तरह से जीर्ण-शीर्ण हालत में था। यहां स्नान के लिए कोई व्यवस्था नहीं थी लेकिन उप्र ब्रज तीर्थ विकास परिषद ने अब इसकी कायाकल्प करा दी है। इसके सौंदर्यीकरण पर 359.76 लाख का व्यय हुए हैं। कुंड की परिक्रमा के लिए पत्थर का फुटपाथ, जन सुविधा केंद्र, सौर ऊर्जा संयंत्र से प्रकाश व्यवस्था के अलावा कुंड में पानी भरने के लिए एक नलकूप की स्थापना करायी गयी है।

नारद कुंड, गोवर्धन

ये कुंड परिक्रमा मार्ग में कुसुम सरोवर के दक्षिण पूर्व में चार सौ मीटर की दूरी पर है। इसका अपना पौराणिक इतिहास है। पुराणों के अनुसार जहां श्री नारदजी तपस्या करते थे, वह नारद वन था। कुंड के किनारे प्राचीन शनि देव जी का मंदिर है। बगल में देवर्षि नारद जी के दर्शन होते हैं।

पुराना नारद कुंड, गोवर्धन

जीर्णोद्धार के बाद नारद कुंड, गोवर्धन

पहले कैसा था नारद कुंड

यह कुंड पहले जीर्ण शीर्ण स्थिति में था जैसा कि पुराने चित्र में ये नजर आ रहा है। हाल ही में अब उप्र ब्रज तीर्थ विकास परिषद ने न केवल इस कुंड को सुंदर बनाया बल्कि नलकूप से जल भरने का इंतजाम किया है। फलत: अब कुंड का जल आचमन के योग्य हो गया है। पहले कुंड पर दो घाट बने हुए थे जो जीर्ण-शीर्ण हालत में थे। बाकी तीन तरफ से यह कुंड कच्चा पड़ा हुआ था। अब कुंड की परिक्रमा के लिए पत्थर का फुटपाथ बनाया गया है। यहां जन सुविधा केंद्र, सौर ऊर्जा संयंत्र से प्रकाश व्यवस्था की गयी है।

यहां शनि देव मंदिर पर एक विशाल वृक्ष है जिसे पारस पीपल के नाम से जाना जाता है। इस वृक्ष पर चार रंग के फूल खिलते नजर आते हैं। धार्मिक मान्यता के अनुसार इसकी पूजा करने से मनवांछित फल की प्राप्ति होती है।

पुराणों के अनुसार एक दिन वृंदा देवी से नारद जी ने गोपी भाव की महानता सुनी। उस समय श्री नारदजी के अंत:करण (मन) में श्री राधाकृष्ण (दिव्य युगल स्वरुप) के गोपी भाव से प्रेम करने की तीव्र इच्छा प्रकट हुई। इसके लिए श्री नारदजी ने अपनी उपासना गोपी भाव से शुरू कर दी।

लंबे समय तक ऐसा करने के बाद योगमाया ने श्री नारदजी से कुसुम-सरोवर में डुबकी लगवाई जिसकी वजह से उन्हें गोपी का स्वरूप प्राप्त हुआ। इसके बाद वह दिव्य युगल की सेवा करने योग्य हो गए। नारद-कुंड में स्नान व दर्शन पुण्यकारी है।

ज्येष्ठ मास के पहले दिन नारद जयंती मनायी जाती है। शास्त्रों के अनुसार देवर्षि नारद ब्रह्मा के छह पुत्रों में से छठवे हैं जिन्होंने कठिन तपस्या करके ब्रह्मर्षि पद प्राप्त किया था। ये भगवान विष्णु के अनन्य भक्तों में से एक थे।

देवर्षि नारद धर्म के प्रचार और लोक-कल्याण के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। शास्त्रों में इन्हें भगवान का मन कहा गया है। इसी कारण सभी युगों में, सभी लोकों में, समस्त विद्याओं में, समाज के सभी वर्गो में नारद जी का सदा से एक महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। मात्र देवताओं ने ही नहीं अपितु दानवों ने भी उन्हें सदैव आदर किया है। समय-समय पर सभी ने उनसे परामर्श लिया है।

श्रीमद्भगवद्गीता के दशम अध्याय के 26 वें श्लोक में स्वयं भगवान श्रीकृष्ण ने इनकी महत्ता को स्वीकार करते हुए कहा है- देवर्षियों में मैं नारद हूँ। श्रीमद्भागवत महापुराण का कथन है, सृष्टि में भगवान ने देवर्षि नारद के रूप में तीसरा अवतार ग्रहण किया। नारद जी मुनियों के देवता थे। इस कुंड स्थल पर ही ध्रुव को भी नारदजी ने प्रवचन और दीक्षा दी थी। भविष्य पुराण के अनुसार नारद जी ने ध्रुव जी को इसी स्थान पर गुरू मंत्र दिया था। इसी स्थान पर दैत्यराज हिरण्या कश्यप की पत्नी कयाधु को भक्ति ज्ञान का उपदेश दिया था। जिसके फलस्वरूप भक्त प्रहलाद का जन्म हुआ था।

नारदजी की ब्रज यात्रा का प्रसंग पद्म पुराण और वृहद नारदीय पुराण में उपलब्ध है। ब्रज में एक बार किशोरावस्था में श्री राधा ने प्रसन्न होकर नारद जी को दर्शन दिए। उनसे वर माँगने को कहा। नारदजी ने उनसे रास दिखाने की प्रार्थना की, तब श्री राधा ने उनको रात्रि के समय कुसुम सरोवर पर रास दिखाया था। नारदजी ने वहां रास देखकर अपने को धन्य माना।

★★★

अतीत की कहानियाँ कहती संग्रहालय की मूर्तियां

सुनील शर्मा

राजकीय संग्रहालय, मथुरा की प्रत्येक मूर्तियां अपनी अतीत की कहानियाँ कहती हैं और उसमें छिपे इतिहास को खोजने और उसे समझने का अवसर भी देती हैं। एक दिन वीथिकाओं का अवलोकन करते-करते अचानक एक मूर्ति पर नजर गयी, यह मूर्ति चार हिस्सों में एक वेदिका स्तम्भ के रूप में बनी हुई है। जिसमें चार चित्र ऊपर से नीचे तक दिखाये गये हैं ऊपर के प्रथम भाग में बोधिसत्व के मुकट का पूजा करते हुए दिखाया गया है जब कि बीच के एक हिस्से में एक साधु एक हिरनी को कुछ चारा खिला व पानी किसी पात्र से पिला रहा है, इसके ठीक नीचे के हिस्से में साधु गर्भवती हिरनी के प्रसव के समय उसके बच्चे को अपने दोनों हाथ में लिये हुए दिखाया गया है, इसी वेदिका स्तम्भ के नीचे अन्तिम हिस्से में साधु एक टोकरी से लड्डु बांटता हुआ दिख रहा है।

यह मूर्ति गोविन्द नगर, मथुरा क्षेत्र से प्राप्त हुई थी यह मूर्ति प्रथम शती ई. की है लगभग 2100-2200 वर्ष की वेदिका स्तम्भ के रूप में मिली जिसके विवरण को पढ़कर ज्ञात हुआ कि यह श्रृंग ऋषि के जन्म का वर्णन करती है। आपने श्रृंग ऋषि का नाम अवश्य ही सुना होगा। श्रृंग ऋषि विभाण्डक मुनि के पुत्र थे विभाण्डक मुनि के विषय में महाभारत में बड़े विस्तार व रोचकता के साथ लिखा गया है। श्रृंग ऋषि विभाण्डक मुनि के पुत्र थे और मस्तक पर सींग होने के कारण इनका नाम श्रृंग पड़ गया।

कहा जाता है उन दिनों देवता व अप्सरायें पृथ्वी लोक में आते-जाते रहते थे। बस्ती मण्डल में हिमालय क्षेत्र का जंगल दूर-दूर तक फैला हुआ था। जहां ऋषियों व मुनियों के आश्रम

हुआ करते थे। आबादी बहुत ही कम थी। आश्रमों के आस-पास सभी हिंसक पशु-पक्षी हिंसक वृत्ति और वैर-भाव भूलकर एक साथ रहते थे। परम पिता ब्रह्मा के मानस पुत्र महर्षि कश्यप के पुत्र महर्षि विभाण्डक उच्च कोटि के सिद्ध सन्त थे। पूरे आर्यावर्त में उनको बड़े श्रद्धा व सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। उनके तप से देवतागण भी भयभीत हो गये थे। इन्द्र को अपना सिंहासन डगमगाता हुआ दिखाई देने लगा था।

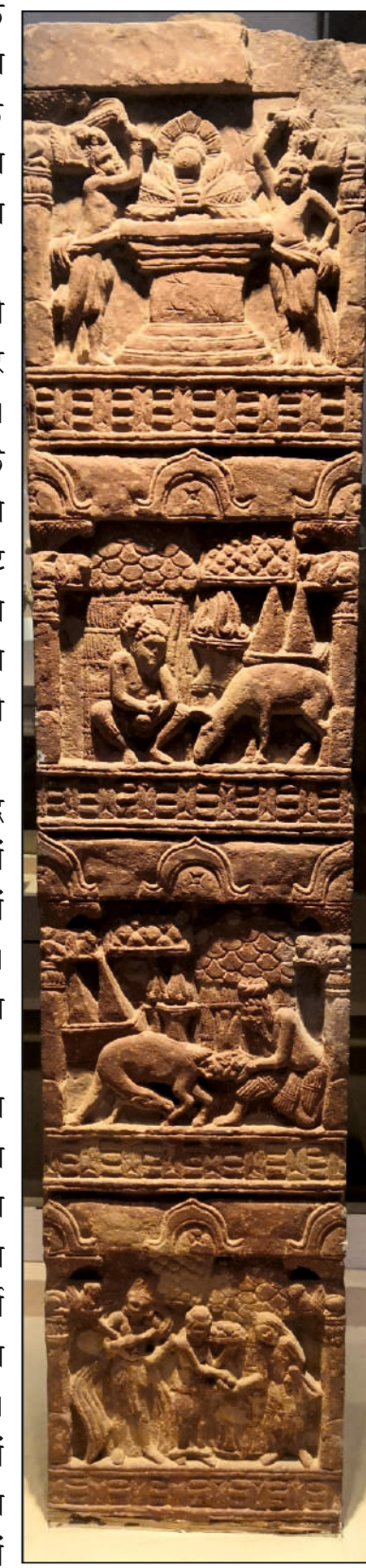

महर्षि विभाण्डक की तपस्या भंग करने के लिए देवताओं ने अपनी प्रिय अप्सरा उर्वशी को महर्षि के आश्रम में भेजा, उर्वशी के प्रेमपाश में पड़कर महर्षि का तप खंडित हुआ और दोनों के संयोग से बालक श्रृंगी का जन्म हुआ। पुराणों में श्रृंग ऋषि को इन दोनों का संतान कहा गया है। चूंकि बालक के मस्तक पर एक सींग था अत: उनका नाम श्रृंग या श्रृंगी कहा गया। बालक को जन्म देने के बाद उर्वशी का काम पूरा हो गया और वह स्वर्गलोक वापस लौट गई। इस धोखे से विभाण्डक इतने आहत हुए कि उन्हें नारी जाति से ही घृणा हो गई। वे क्रोधित रहने लगे तथा लोग उनके शाप से बहुत डरने लगे थे। उन्होंने अपने पुत्र को मां, बाप तथा गुरू तीनों का प्यार दिया और उसे तीनों की कमी कभी नहीं होने दी।

एक अन्य जनश्रुति कथा के अनुसार एक बार महर्षि विभाण्डक इन्द्र की सबसे प्रिय अप्सरा उर्वशी को देखते ही उस पर मोहित हो गये तथा नदी में स्नान करते समय उनका वीर्यपात हुआ। एक शापित देवकन्या मृगी के रूप में वहां विचरण कर रही थी। उसने जल के साथ वीर्य को ग्रहण कर लिया। जिससे एक बालक का जन्म हुआ उसके सिर पर सींग उगे हुए थे। उस विचित्र बालक को जन्म देकर वह मृगी शापमुक्त होकर स्वर्ग लोक को चली गई।

किन्तु यहां राजकीय संग्रहालय, मथुरा में स्थित वेदिका स्तम्भ जिसका पंजीयन संख्या 76.40 का जिक्र करना ही पड़ेगा क्यों कि करीब 2200 वर्ष पूर्व यानी कि प्रथम शती ई. पूर्व की इस वेदिका स्तम्भ का मथुरा नगर के बीचों बीच गोविन्द नगर क्षेत्र से प्राप्ति और उसमें अंकित मूर्ति के चित्र इस इतिहास को सच साबित करती हुई दिख रही है, संग्रहालय में संरक्षित मूर्ति के विवरण के अनुसार विभाण्डक मुनि के आश्रम में एक हिरणी रहती थी मुनि को उससे प्रेम हो गया तत्पश्चात मुनि ने इस हिरणी के साथ समागम किया। इसके पश्चात श्रृंग का जन्म हुआ और इस वेदिका स्तम्भ के ऊपरी भाग में बोधिसत्व के मुकुट का पूजन शीर्षभाग में दर्शाया गया है, इसके नीचे एक मुनि अपने आश्रम में एक हिरनी को चारा खिला रहे हैं, इसके नीचे तीसरे भाग में

हिरनी से ऋषि पुत्र का जन्म अंकित है और सबसे नीचे ऋषि कुमार के जन्मोत्सव पर मिठाई वितरण का दृश्य अंकित है।

आहत हुए विभाण्डक मुनि ने आश्रम में किसी भी नारी का प्रवेश वर्जित कर दिया था। वे पूरे मनोयोग से बालक का पालन पोषण कर रहे थे। बालक अपने पिता के अलावा अन्य किसी को जानता तक नहीं था। नारी जाति को उसने न कभी देखा न उसके विषय में उसे कोई ज्ञान था। यह आश्रम मनोरमा जिसे सरस्वती भी कहा जाता था; के तट पर स्थित था और अंग देश से भी लगा हुआ था। देवताओं के छल से आहत महर्षि विभाण्डक तप और क्रोध करने लगे थे। उस आश्रम में कोई तामसी वृत्ति नहीं पायी जाती थी। महर्षि विभाण्डक तथा नव ज्वजल्यमान (चमकता हुआ) बालक श्रृंग के साथ ही आश्रम में रहते थे।

कहा जाता है कि उन दिनों आश्रम के निकट ही अंग देश में भयंकर सूखा पड़ा था। अंग के राजा रोमपाद (चित्ररथ) ने अपने मंत्रियों व पुरोहितों से मंत्रणा की, सभी ने श्रृंग ऋषि को राज्य में बुलाने का सुझाव दिया। क्यों कि श्रृंग ऋषि अपने पिता विभाण्डक से भी अधिक तेजवान एवं प्रतिभावान बन गये थे। उसकी ख्याति

दिग-दिगन्तर तक फैल गई थी। राज दरवारियों ने अंगराज को सलाह दी कि किसी तरह से यदि महर्षि श्रृंग को अंग देश में लाया जाये तो राज्य से अकाल और सूखा समाप्त हो जायेगा। मगर पिता के रहते पुत्र को आश्रम से बाहर लाना असम्भव था।

इसके लिये अंग राज ने योजना बनाई जब एक बार महर्षि विभाण्डक आश्रम से कहीं बाहर गये हुए थे, अवसर की प्रतीक्षा में अंगराज ने श्रृंग ऋषि को रिझाने के लिए देवदासियों तथा सुन्दिरियों को वहां भेज दिया। उनके लिए गुप्त रूप से आश्रम के पास एक शिविर भी लगवा दिया गया। त्वरित गति से उस आश्रम में सुन्दरियों ने तरह-तरह के

हाव-भाव से श्रृंग ऋषि को रिझाने का कार्य प्रारम्भ कर दिया। ऋषि कुमार को तरह-तरह के व्यंजन तथा पकवान उपलब्ध कराये गये। श्रृंग ने कभी भी कोई स्त्री को देखा तक नहीं था इन सुन्दरियों को अपने पास पाकर वह उनके मोहपाश के जाल में फंसने लगा।

महर्षि विभाण्डक के आने के पहले ही वह सुन्दरियां वहां से पलायन कर जाती थीं। ऋषि कुमार श्रृंग अब चंचल मन वाले हो गये थे। पिता के कहीं बाहर जाते ही वह छिप-छिप कर उन सुन्दिरियों के शिविर में स्वयं ही पहुच जाते थे। सुन्दरियां योजना के अनुसार श्रृंग को अपने साथ अंग देश ले जाने मे सफल हुईं।

जहां ऋषि कुमार के विषय में कहा गया हैं कि उन्होंने किसी भी स्त्री कभी देखा नहीं था। तो संग्रहालय के एक अन्य वेदिका स्तम्भ में दृश्य दर्शाया गया है कि कुछ स्त्रियां नाव से गन्तव्य तक पहुंच रही हैं। दूसरे दृश्य में मुनि विभांडक की अनुपस्थिति में गाना बजाना हो रहा है तथा ऋषि कुमार को लुभाने का प्रयत्न किया जा रहा है। इसके और अन्त में श्रृंग ऋषि प्रेमपाश में बंधे हुए दिखाये गये हैं। वीथिका में ही सामने के स्तम्भ में एक अन्य मूर्ति में ऋषि कुमार को स्त्री संसर्ग के पश्चात उद्विग्न (खिन्नता के भाव) में स्थित दिखाया गया है।

अंग देश में ऋषि कुमार का बड़े ही हर्ष और उल्लास के साथ स्वागत किया गया। श्रृंग ऋषि के पहुंचते ही अंग देश में वर्षा होने लगी। देशवासी सभी लोग अति आनन्दित हुए। उधर अपने आश्रम में पुत्र श्रृंग को ना पाकर महर्षि विभाण्डक को क्रोध और आश्चर्य हुआ। उन्होंने अपने योग बल से सब जानकारी प्राप्त कर ली और अपने पुत्र को वापस लाने तथा अंग देश के राजा को दण्ड देने के लिए महर्षि विभाण्डक अपने आश्रम से अंग देश के लिए निकल पड़े।

अंगदेश के राजा रोमपाद तथा राजा दशरथ

दोनों मित्र थे। महर्षि विभाण्डक के शाप से बचने के लिए रोमपाद ने राजा दशरथ की कन्या शान्ता को अपनी पोश्या पुत्री का दर्जा प्रदान करते हुए जल्दी से श्रृंग ऋषि से उसकी शादी करा दी। महर्षि विभाण्डक को देखकर एक योजना के तहत अंगदेश के वासियों ने जोर-जोर से शोर मचाना शुरू दिया कि "इस देश का राजा महर्षि श्रृंग हैं।" अपने पुत्र को पुत्रवधू के साथ देख कर महर्षि विभाण्डक का क्रोध दूर हो गया और उन्होंने अपना विचार बदलते हुए बर वधू के साथ राजा रोमपाद को भी आशीर्वाद दिया और अपने पुत्र व पुत्रवधू को साथ लेकर महर्षि विभाण्डक अपने आश्रम लौट आये और शान्ति पूर्वक रहने लगे। उधर अयोध्या के राजा दशरथ के कोई सन्तान नहीं हो रही थी। उन्होंने अपनी चिन्ता महर्षि वशिष्ठ को बताई। महर्षि वशिष्ठ ने श्रृंग ऋषि के द्वारा अश्वमेध तथा पुत्रेष्ठी कामना यज्ञ करवाने का सुझाव दिया। तब राजा दशरथ नंगे पैर श्रृंग ऋषि के आश्रम में गये थे। तरह-तरह से उन्होंने महर्षि श्रृंग ऋषि की वन्दना की। ऋषि को उन पर तरस आ गया। महर्षि वशिष्ठ की सलाह को मानते हुए वह यज्ञ की पुरोहिता करने को तैयार हो गये। उन्होने एक यज्ञ कुण्ड का निर्माण कराया। इस स्थान को मखौड़ा कहा जाता है।

रूद्रायामक अयोध्या-काण्ड 28 में मख स्थान की महिमा को इस प्रकार कहा गया है-

कुटिला संगमाद्देवि शान्ये
क्षेत्रमुत्तमम्।
मखःस्थानं महत्पूर्णा यम
पुण्यामनोरमा॥

स्कन्द पुराण के मनोरमा महात्य में मखक्षेत्र को इस प्रकार महिमा मण्डित किया गया है-

मखःस्थलमितिख्यातं
तीर्थाणामुत्तमोत्तमम्।
हरिष्चन्द्रादयो यत्र यज्ञै
विविध दक्षिणे॥

महाभारत के बनपर्व में इस आश्रम को चम्पा नदी के किनारे बताया है। उत्तर प्रदेश के

पूवोत्तर क्षेत्र के पर्यटन विभाग की बेवसाइट पर इस आश्रम को फ़ैजाबाद जिले में होना बताया गया है। परन्तु अयोध्या से इस स्थान की निकटता तथा परम्परागत रूप से 84 कोस की परिक्रमा मार्ग में सम्मलित होने के कारण इसकी सत्यता प्रमाणित होती है।

ऋषि श्रृंग के यज्ञ के परिणाम स्वरूप राजा दशरथ को राम, लक्ष्मण, भरत तथा शत्रुघ्न नामक चार सन्तानें हुई थी। जिस स्थान पर उन्होंने यह यज्ञ करवाये थे वहां आज भी एक प्राचीन मंदिर बना हुआ है। यहां श्रृंग ऋषि व माता शान्ता का मंदिर बना हुआ है। यहां इनकी समाधियां भी बनी हुई हैं। यह स्थान अयोध्या से पूरब में स्थित है। आषाढ़ माह के अन्तिम मंगलवार को बुढ़वा मंगल का मेला लगता है। माताजी को पूड़ी व हलवा का भोग लगाया जाता है। इसी दिन त्रेतायुग में यज्ञ का समापन हुआ था। यहां पर शान्ता माता ने 45 दिनों तक अराधना की थी। यज्ञ के बाद ऋषि श्रृंग अपनी पत्नी शान्ता को अपने साथ लिवा ले जाना चाहते थे किन्तु वह वहां से नहीं गई और वर्तमान मंदिर में पिण्डी बनकर समां गयीं। पुरातत्वविदों के सर्वेक्षणों में इस स्थान के ऊपरी सतह पर लाल मृदभाण्डों, (मिट्टी के वर्तनों) भवन की संरचना के अवशेष तथा ईंटों के टुकड़े प्राप्त हुए हैं।

महाप्रभु वल्लभाचार्य व श्री चैतन्य देव

कपिल देव उपाध्याय

"श्री गौर वल्लभ भगवत्परायणौ महाप्रभु भक्ति प्रियौ सुनाय कौ,
भक्ति परौ कृष्ण कथाति गाय कौ भक्ति विहिनस्य प्रसीदता मे॥"

जो दोनों ही भगत्परायण है, दोनों ही अपने-अपने भक्तों को अत्यन्त प्रिय है, दोनों ही आचार्य माने जाते है, दोनों ही भक्ति निष्ठ हैं और दोनों ही कृष्ण कथा गान करने में अत्यन्त कुशल है। ऐसे महाप्रभु गौराङ्गदेव और महाप्रभु वल्लभाचार्य मुझ भक्ति विहिन मनुष्य के ऊपर प्रसन्न हो।

राजनैतिक अस्थिरता भययुक्त वातावरण, मत प्रगट करने की परतन्त्रता, धर्म परायणता पर विधर्मी अंकुश से संवाहित होने वाले समाज के मध्य उपर्युक्त दोनों महानुभावों का प्रादुर्भाव क्रमशः वि. सम्वत 1541 व 1535 में हुआ। महाप्रभुवल्लभाचार्य छः वर्ष श्रीचैतन्य देव जी से आयु में बड़े थे।

महाप्रभु वल्लभ यजुर्वेद, तैत्तरिय दक्षिणी भट्ट ब्राह्मण कुल में उत्पन्न थे। यह कुल बेल लट् नाम से प्रसिद्ध था। पिता लक्ष्मण भट्ट व माता इलम्मा गारू कृष्णा नदी के दक्षिण तट काकरवाड़ के निवासी थे। एक बार सपत्निक तीर्थ यात्रा पर काशी आये व हनुमान घाट पर ठहरे। काशी में उस समय अशान्त वातावरण के कारण एवं नगर लौटने के उत्कण्ठा से यात्रा की, परन्तु पत्नी के गर्भवती होने के कारण मार्ग में चोडा नगर में महाप्रभु प्रार्दुभाव हुआ।

बंगला में भी श्रीचैतन्य देव के प्रादुर्भाव के समय भी सम वातावरण था। महाप्रभु परिब्राजक थे, इन्होंने संपूर्ण देश की कई बार व्रज व अन्य प्रदेश उत्तर से पश्चिम-दक्षिण की यात्राऐं की। परन्तु अपना निवास केन्द्र प्रयाग के नजदीक अरैल, काशी, चुनार व गोकुल को बनाया ऐसा प्रसिद्ध है। वर्तमान गोकुल की स्थापना इन्हीं के द्वारा सम्पन्न हुई जबकि वह पना अपना अस्तित्व खो चुका था। ब्रह्मचर्य के साथ भागवत संन्यासी के धर्म पालन करते हुए, जीवन व्यतीत करने लगे, तदन्तर गोवर्धन नाथ जी की प्रेरणा से ग्रहस्थ धर्म मं लक्ष्मी देवी के साथ विवाह उपरांत प्रवृत्त हुए। इनके दो पुत्र ज्येष्ठ गोपीनाथ जी व गोस्वामी विट्ठल नाथजी। श्रीगोस्वामी विट्ठल नाथ जी के सात पुत्र क्रमशः गिरधर लाल जी, गोविन्द लाल जी, श्रीबालकृष्ण जी, श्रीगोकुलेश जी, श्रीरघुनाथजी, श्रीयदुनाथ जी और घनश्यामलाल जी।

गो. विट्ठलनाथ जी के द्वारा सात गद्दीयां स्थापित की गयी, जो अभी तक निरन्तर धर्म प्रचार में क्रियाशील है।

महाप्रभु वल्लभाचार्य जी ने मुख्यत: दो मार्गो का प्रतिपादन किया।

1. निवृत्ति मार्ग, 2. प्रवृत्ति मार्ग।

निवृत्ति मार्ग– ग्रह त्याग करके संन्यास धर्म ग्रहण करने के लिए है। परन्तु इनके मतानुसार निवृत्ति मार्ग, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास आदि के धर्म को पालन करते हुए ईश्वर की आराधना है, इन्होंने स्वंयम भी प्रवृत्ति मार्ग को अपनाया। प्रवृत्ति मार्ग में प्रत्येक कर्म कृष्णार्षण बुद्धि से सम्पन्न किया जाता है या कहते है निस्वार्थ भाव से इसे ही निष्काम कहते है। श्रीमहाप्रभु वल्लभाचार्य जी ने पुष्टिमार्ग– शुद्धाद्वैत सिद्धान्त का प्रतिपादन पंच सूत्रों में किया।

गृहं सर्वात्मना त्याजं तच्चे क्त्यक्तुं न शक्यते।
कृष्णार्थं तत्प्रयुञ्जीत कृष्णोऽनर्थस्य मोचक:॥

घर का पूर्ण रूप से परित्याग कर देना चाहिए। यदि घर का पूर्ण रूप से त्याग कराने में समर्थ न हो, तो घर में रहकर ही सब कार्य कृष्ण के निमित्त उनके सर्मपण ही करें क्योंकि कृष्ण सभी प्रकार के अनर्थों (पापों) का भोजन करने वाले है।

सङ्ग सर्वात्मना त्याज्य: स चेक्त्यंक्तुं न शक्यते।
स सद्भि: सह: कर्तव्य सन्त: सङ्गस्य भेजषम्॥

संग किसी का करना ही नहीं चाहिए। सभी प्रकार के संगों का एक दम परित्याग कर देना चाहिए। सब प्रकार के संगों का परित्याग करने में सर्मथ न हो, तो सज्जन तथा सन्त, महात्माओं का ही संग करना चाहिए क्योंकि संग से जो काम इच्छा उत्पन्न होती है, उसकी औषधी सन्त महात्मा ही है।

भर्यादिरनुकूल चेत्कार ये भ्दगवत्क्रिया:।
उदासीने स्वयं कुर्यात प्रतिकूले गृहं त्येजत्:॥
तत्त्यागे दूषणं नास्ति यतो विष्णु पराङ्गमुख:।

यदि स्त्री आदि परिवार अपने मन माफिक भागवत अनुयायी हो, तो उनसे भगवान की सेवा पूजा आदि करावे, यदि वह इस ओर उदासीन हो, तो उनसे न कराकर स्वयं करें। यदि वह भागवत सेवा के विरूद्ध हो, तो एक दम घर त्यागकर एकान्त में ही जा कर भगवत पूजा अर्चना करनी चाहिए।

अनुकूलस्यं सङ्कल्प: प्रतिकूल विसर्जनम्॥
रक्षिष्यतीति विश्वासो भर्तृत्वे वरणे यथा।
आत्मनैवेद्य कार्पण्ये षड्विधा शरणागति:॥

–भगवद् पूजा

भगवत सेवा में अनुकूल का चिन्तन करना चाहिए, सेवा में विघ्न प्रतिकूल का त्याग करना चाहिए। जिस प्रकार पतिव्रता स्त्री को पति पर विश्वास होता है। विपत्ति के अवसर पर मेरी अवश्य रक्षा करेगा, इसी

प्रकार पर श्रीकृष्ण पर विश्वास करना चाहिए, वह हमारी समय पर रक्षा अवश्य करेंगे। भगवान को आत्म निवेदन करने पर उनके प्रति दीनता रखना यहीं ही छः प्रकार की शरणागति है। लगभग समान सिद्धान्त ही चैतन्य महाप्रभु ने सम्पदित किये, दीनता श्रीकृष्ण के प्रति विश्वास श्रीकृष्ण के प्रति, प्रेम श्रीकृष्ण के प्रति, साधन कर श्रीकृष्ण की उपासना ही परम ध्येय है।

तृणादपि सुनीचेन, तरोरपि सहिष्णुना।
अमाननीय मानदेय कीर्तनीयः सदा हरिः॥
हरे नार्म हरे नार्म हरे नार्म कैवल्यम्।
कलौ नास्त्येव कलौ नास्त्येव गतिरन्यथाः॥

अपने को तृण के समान लघु (अंहकार रहित) समझो, वृक्ष के समान सहनशील बनो जो मान करने योग्य नहीं है उनका भी सम्मान करते हुए श्रीकृष्ण का हमेशा कीर्तन करना चाहिए।

हे कृष्ण हे कृष्ण हे कृष्ण ही केवल इस घोर कलियुग में सभी संसार की विघ्न बाधाओं, रूकावट को कृष्णा मिलन में दूर करने वाले है।

चैतन्य देव गृहत्याग कर नीलांचल में जगन्नाथ पुरी को केन्द्र बनाया, वहाँ से दक्षिण व ब्रज की यात्रा की। जब ब्रज से लौटकर प्रयाग में त्रिवेणी तट पर प्रवास किया, महाप्रभु की प्रसिद्धि होने के कारण उक्त स्थान पर दिन-प्रतिदिन भक्त श्रद्धालुओं की भीड़ बढ़ने लगी तब चैतन्य देव ने एकान्त वास की इच्छा से दारागांव के समीप गंगा के घाट पर आकर रहने लगे। उस समय महाप्रभु वल्लभाचार्य जी अरैल में प्रवास पर थे। उन्होंने चैतन्य देव के कीर्तन भक्ति के बारे में प्रशंसा सुन रखी थी। वह भेंट का लोभ संवरण न कर सके। एक दिन चैतन्य देव के दर्शन हेतु पधारे, परन्तु चैतन्य देव ने भी आचार्य की प्रशंसा सुनी थी, वह उन्हें देखते ही अपने बाहुँपाश में जकड़ कर प्रेमालिंगन किया व प्रेम से झर-झर अश्रु बहाने लगे। महाप्रभु वल्लभाचार्य भी उनके प्रति श्रद्धा से गद-गद होकर अधीर हो गये। शरीर रोमांचति व प्रलभित हो गया। श्रीचैतन्य देव श्रीवल्लभाचार्य जी के पाण्डित्य की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। उस समय रूप गोस्वामी व उनके अनुज अनूप भी श्रीचैतन्य देव के पास में थे। जब श्रीचैतन्य ने इनका परिचय दिया, तब श्रीवल्लभाचार्य अपने हृदय से लगाने को अग्रसर हुए, लेकिन रूप पीछे हट कर दीनता से कहने लगे, मैं यवनों के संग रहने के कारण आपके स्पर्श योग्य नहीं हूँ। वह इनके चरणों में गिर पड़े।

श्रीवल्लभाचार्य इनकी शलीनता देखकर अत्यन्त प्रभावित हुए, इन्हें बलात् हृदय से लगा लिया, इनका आलिंगन करने लगे। प्रभु के शरणागत हुआ अस्पृस्थ कैसे हो सकता है।

इसके उपरांत आचार्य वल्लभ जी ने श्रीचैतन्य देव से प्रार्थना की कि आप मेरे यहाँ भिक्षा हेतु पधारें। श्रीचैतन्य देव श्रीवल्लभाचार्य जी के साथ अरैल उनके निवास में जाने को तत्पर हुए, साथ में रूप अनूप सहित सभी भक्त अनुचर थे।

श्रीवल्लभाचार्य जी ने एक सुन्दर संजी हुई नौका में बैठाकर यमुना के द्वारा अरैल की ओर अग्रसर हुए। जैसे ही यमुना की धारा के मध्य में सलिल जल देखकर राधा के भावावेश में नौका पर ही नृत्य करने लगे, नौका

डांवाडोल होने लगी सभी चिन्तित हुए, तभी परम भावावेश में यमुना में कूंद गये। हे कृष्ण हे कृष्ण प्राण प्यारे, प्राण प्यारे उद्‌बोधन बार-बार करते, नाविकों ने जल से निकारकर नाव में चढ़ाया, तब यह दोनों महापुरुष अरैल निवास पर पहुँचे, वहाँ आचार्य ने श्रीचैत्न्य देव का पाठ-पूजन कर भिक्ष ाकरायी। समस्त ग्रामीण सूचना पाकर दर्शन हेतु आये। परन्तु महाप्रभु वल्लभाचार्य चिन्तित थे कि यमुना उनके निवास से दिख लायी देती थी, पुनः भावावेश में न आ जाये। परन्तु चैतन्य देव जी कहा, भगवान मैं आपके यहाँ भिक्षा प्रसाद पाकर अत्यन्त संतुष्ट व तृप्त हूँ, मैने आपके यहाँ अतिथ्य का सौभाग्य प्राप्त हुआ, मुझे सभी तीर्थों का फल आज आपकी कृपा से प्राप्त हो गया। फिर महाप्रभु ने चैन्तय देव के समीप जाकर श्रीकृष्ण कथामृत का पान कराया। यहीं पर उस समय के प्रसिद्ध कवि तिरुहुत निवासी रघुपति उपाध्याय पंडित श्री चैतन्य देव के दर्शन करने आये व संस्कृत की कुछ स्वयं रचित श्लोक सुनाये, इन्हें सुनकर चैतन्य देव अत्यन्त प्रसन्न हुए।

प्रभु चैतन्य देव ने आचार्य वल्लभाचार्य जी से लौटने की आज्ञा ली, चैतन्य देव जी को पुनः उनके स्थान पर पहुँचाया।

महाप्रभु वल्लभाचार्य जी व श्री चैतन्य देव के मध्य एक अनुपम रिश्ता था, माधवेंद्र पुरी, यह श्रीवल्लभचार्य जी के शिक्षा गुरु थे एवं चैतन्य देव जी के गुरू ईश्वरी पुरी के भी गुरू थे।

★★★

वल्लभ संप्रदाय मांहि अष्टछाप

हरी बाबू ओम

वल्लभ संप्रदाय मांहि अष्ट छाप आज के जा विसै पै चर्चा करिवे ते पहिले हम सब काहू एक बात पै एक मत है जांय तौ चर्चा की सफलता हू है और सार्थकता भी। हम सब जि तौ माने ही हैं कि हिन्दू धर्म वहुदेव वादी है संग ही संग वायु पुराण के जा श्लोक के केवल प्रथम चरण पै ध्यान दें मुंडे मुंडे मर्तिभिन्ना तो निश्चित रूप ते हिन्दू धर्म में अनेक मत, पंथ, संप्रदाय है वौ स्वाभाविक है।

एक ही धर्म की अलग-अलग परम्परा या विचार धारा कूं मानवे वारे वर्गन कूँ हम संप्रदाय कहें हैं, हमारे हिन्दू धर्म में विशेष रूप ते चार वैष्णव संप्रदाय मान्य हैं। शुद्धादैत दर्शन के आधार पै महाप्रभु वल्लभाचार्य जी ने अपने मत कौ प्रतिपादन कियौ लगे हाथ जि हू बता दऊं राजा कृष्ण देव राय के दरबार में वैष्णवों और शैव्यों के मध्य भये शास्त्रार्थ में अनेकन विद्वानन कूं पराजित करके महाप्रभु की पदवी ते विभूषित महान दार्शनिक आप श्री कौ जि मत वल्लभ संप्रदाय के नाम ते जानौ मानौ जाय जि वल्लभ सम्प्रदाय हू वैष्णव संप्रदाय के अन्तर्गत ही आवै है।

वल्लभ संप्रदाय में जाकूं नाम मंत्र कहें वू भक्ति मंत्र श्री कृष्ण-शरण मम है जाकौ सूधौ सांचौ सरल सौ अर्थ है कि मैं श्रीकृष्ण की शरण हूँ। अध्यात्म पथ के पथिक गंभीरता ते चिंतन मनन करके यही स्वीकारें कि भक्ति के विभिन्न अवयव पूजा-पाठ, जप-तप, भजन-कीर्तन, दान-पुण्य, सदाचार संयन आदि आदि सब कछू कर लेउ पर इन सबकौ सार सर्वस्व शरणागति ही है तबही तो गोविन्द के गीत गीता में योगेश्वर श्रीकृष्ण खुलौ अश्वासन दें मामेकं शरणं व्रज: जाही क्रम में कहें तो मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की प्रतिज्ञा की सी भावना कूं गोस्वामी तुलसीदास जी बतामें या दोहा के माध्यम ते शरणागत कूं जो तजें, हित अनहित अनुमान। जि ते नर पांमर पापमय तिन्हें विलोकत हान। सृष्टि में दृष्टि डारे तो दीखै जो जाकी शरण गहै ताहै ताकी लाज। जल समहीं मछली डरै वहै जात गजराज। कहिवे कौ मतलब है कि प्यारे कौ प्यारौ संप्रदाय शरणागति मतहू कहयौ जाय।

या संप्रदाय कौ प्रचीन नाम रूढ़ संप्रदाय हतौ। भक्ति के क्षेत्र में महाप्रभु वल्लभाचार्य कौ जि साधन मार्ग पुष्टि कहलातै है पुष्टि कौ शब्दिक अर्थ पोषण यानि अनुग्रह होय है। पुष्टि मार्ग में औपचारिक दीक्षा कूं ब्रह्म सम्बन्ध कहें हैं अनुग्रह के जा मार्ग में ब्रह्म सम्बन्ध दैवै कौ अधिकार केवल इनके वंशजन कूँ ही है जिन्हें वल्लभीय वैष्णव वासा जै जै आदि सम्मानीय सम्बोधन ते सम्बोधित करें है पुष्टि सम्प्रदाय में श्रीकृष्ण कूं हू कयी नामन और उपनामन ते जानौ जाय जैसे श्रीनाथ जी, श्रीनवनीत प्रिया जी, श्रीमदन मोहन जी, श्री मथुरेश जी, श्रीगोकुल जी, श्रीविट्ठलनाथ जी, श्रीद्वारिकाधीश जी आदि आदि।

पुष्टि मार्ग कौ अवतरण वल्लभाचार्य जी के शुद्धादैत वैदान्तिक उपदेशन कूं मानते भये अद्वैत वेदांत विशिष्टा द्वैत तथा द्वैत वेदांत के कछु विचारन की स्वीकार कें ही मर्या है वल्लभाचार्य के अनुसार श्रीकृष्ण सर्वोच्च देव हैं आध्यात्मिक मुक्ति कौ परिणाम कृष्ण कृपा ते ही है या मार्ग में तपस्वी जीवन शैली कूँ असवीकार करके गृहस्थ जीवन शैली कूँ स्वीकारौ गयौ है यामें संसारिक इच्छान कूँ दबाबे की आवश्यकता नांय जा मार्ग में तौ सबई संसारिक इच्छान कूं श्रीकृष्ण की ओर मोड देने की आवश्यकता है। काव्य में या बात कूं ऐसे कहयौ जाय सकै भोग राग ठाकुर कूं अर्पित मन अनुराग बढानौ।

पुष्टि मार्ग में सेवा के दो प्रमुख प्रकार हैं नाम सेवा और रचरुप सेवा स्वरूप सेवा तीन तरह ते होय तनुजा वित्तजा और मानसी।

मानसी सेवा में दो प्रकार मर्यादा मार्गीय और पुष्टि मार्गीय

मर्यादा मार्गीय मानसी सेवा पद्धति कौ आचरण करवे वारौ साधक जामें ममता अहंता कौ त्याग करै हैं तो पुष्टि मार्गीय मानसी सेवा वारौ साधक शुद्ध प्रेम के द्वारा श्रीकृष्ण भक्ति में लीन हैकै श्रीकृष्ण के अनुग्रह कूं सहज प्रापत कर लेय है। या मार्ग के प्रमुख देवता श्रीकृष्ण है तो श्रीकृष्ण की चतुर्थ पटरानी श्रीयमुना जी जा मार्ग की प्रमुख देवी है श्री यमुना जी ने ही श्रीवल्लभाचार्य जी कूँ श्रीमद्भागवत के परायण कौ आदेश दियौ श्रीयमुनाजी के ताई वल्लभ संप्रदाय के प्रर्वतक श्रीवल्लभाचार्य जू ने यमुनाष्टक की रचना करी पुष्टि मार्ग में सेवा के और हू आयाम हैं राग (हवेली संगीत) कीर्तन भोग वस्त्र आदि।

वल्लभाचार्य जी नै अपने पुष्टि मार्ग के प्रचार प्रसार कौ प्रमुख केन्द्र व्रज क्षेत्र में स्थित गोवर्धन पर्वत पै वने श्रीनाथजी के मंदिर कू बनायौ जा मंदिर कौ निर्माण इनके शिष्य पूरनमल क्षत्री ने करवायौ हतौ कृष्ण भक्ति रसामृत ते जगत के भगवत विमुख मनुष्यन कूं श्रीठाकुर जी कौ बनायवै के ताई आप री ने और आपके कनिष्ठ पुल गौसाई विट्ठल नाथ जी कृष्ण विषयक भक्ति रस के कवियन कौ एक समूह बनायौ जाकूं समयानुसार अष्ट छाप कौ नाम मिलौ अष्ट छाप की स्थापना 1565 ई. में भयी जामें पुष्टि मार्गीय आचार्य वल्लभ के काव्य कीर्तनकार शिष्य कुंभनदास, सूरदास, कृष्णदास और परमानंद दास ने चार हतै। बाद में आचार्य वल्लभ के पुत्र गौसाई विट्ठलनाथ जी ने भी चार शिष्य कीर्तनकार गोविंद स्वामी, छीत स्वामी, नंददास, चतुर्भुजदास बनाये जे आठों सवई वर्णन के हते ये अपने द्वारा रचित विभिन्न पदन कौ गायन करते जि अपने पदन में भगवान् श्रीकृष्ण की लीलान कौ गुनगान करते आठौं ही व्रजभूमि के निवासी हते ये परम भागवत हैवे के कारन भववदीय कहे जाते जे अपनी निश्चल भक्ति के कारन भगवान् श्रीकृष्ण के सखा भी माने जाते। इनकी रचनान को सामूहिक संग्रह हू अष्टछाप कहयौ जाय।

★★★

उपेक्षित मंदिर स्मारक मित्र योजना से होंगे संरक्षित

चन्द्र प्रताप सिंह सिकरवार

वृंदावन के मदन मोहन व गोविंद देव मंदिरों के लिए योजना का कार्यान्वयन प्रारंभ।

रसखान समाधि और कुसुम सरोवर के संरक्षण का जिम्मा पहले ही जीएलए विवि को सौंपा जा चुका।

भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (एएसआई) ने अब वृंदावन के उन मंदिरों के संरक्षण का संकल्प लिया है जो सप्त देवालयों में सम्मिलित हैं। फिलहाल दो मंदिरों को 'स्मारक मित्रों' को सौंपा जा रहा है। ये मित्र इनका संरक्षण करेंगे। एएसआई ने कुल आठ देवालयों पर जनसुविधाएं बढ़ाने की योजना बनाई है।

पहले चरण में शहर के सप्त देवालयों में शामिल वृंदावन के ठाकुर मदन मोहन मंदिर और गोविंद देव मंदिर को लिया गया है। इनमें सुविधाओं के अभाव को दूर किया जाएगा। इन मंदिरों में काफी समय से कम दर्शनार्थी आ रहे हैं। इस कारण संरक्षण भी नहीं हो पा रहा। फलत: ये ऐतिहासिक धरोहर खतरे में हैं।

चैतन्य महाप्रभु से प्रभावित होकर तत्कालीन राजाओं और सेठों ने वृंदावन में सात देवालयों की स्थापना की थी। ये सभी देवालय भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (एएसआई) के अधीन हैं। यहां जनसुविधाएं नहीं बढ़ पाई हैं। काफी समय से प्रचार-प्रसार भी नहीं हो पा रहा है। इस वजह से चुनिंदा श्रद्धालु ही पहुंचते हैं।

मदन मोहन मंदिर पर प्रकाश की व्यवस्था नहीं है। भक्तों के लिए बैठने तक का इंतजाम नहीं है। पेड़ पौधे भी नही हैं। इनकी सुंदरता निखर कर नहीं आ रही। मदन मोहन मंदिर के महंत का कहना है कि यहां रोजाना 100 से 150 श्रद्धालु ही पहुंच पाते हैं। कीर्तन हॉल पर एएसआई ने ताला लगाया हुआ है।

गोविंद देव मंदिर में शाम को सात बजे ही मंदिर के पट बंद हो जाते हैं, जबकि स्थानीय लोगों का कहना है कि मंदिर का समय अन्य मंदिरों की तरह नौ बजे तक हो जिससे कि श्रद्धालुओं की संख्या में इजाफा हो सके।

इन मंदिरों के पास हाल ही में शौचालय और पेयजल की व्यवस्था तो की गयी है, लेकिन संचालन नहीं हुआ है। सुविधाएं बढ़ाने की ओर एएसआई का ध्यान तो गया है, पर संरक्षण नहीं हो पा रहा। मदन मोहन मंदिर के पत्थर टूटने लगे हैं। टीले से मिट्टी और ककईया ईट गिरने लगी हैं। गोविंद देव मंदिर के अंदर शाम होते ही अंधेरा छा जाता है, यहां भी टिनशेड नहीं है।

विदित हो कि भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण संगठन की ओर से आठ देवालयों के लिए स्मारक मित्र खोजे जा रहे हैं।

इससे पूर्व उप्र ब्रज तीर्थ विकास परिषद की पहल पर भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण संगठन ने महावन की रसखान समाधि और गोवर्धन के कुसुम सरोवर के संरक्षण की जिम्मेदारी जीएलए विश्वविद्यालय को सौंपी है। इसके अच्छे परिणाम सामने आये हैं।

★★★

मथुरा डॉक पंजीयन संख्या–070/2022–24 पंजीयन संख्या UPHIN 2003/11917